झारखण्ड उच्च न्यायालय, रांची

सिविल रिट याचिका - 1391/2009

विजय कुमार झा ..... **याचिकाकर्ता**

-बनाम-

1. झारखंड राज्य।

2. निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार, रांची।

3. क्षेत्रीय उप शिक्षा निदेशक, उत्तरी छोटानागपुर प्रमंडल, हजारीबाग।

4. जिला शिक्षा अधिकारी, धनबाद ..... **प्रतिवादी**

न्यायालय: माननीय न्यायमूर्ति डॉ. एस.एन.पाठक

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री इंद्रजीत सिन्हा, अधिवक्ता
श्री अर्पण मिश्रा, अधिवक्ता
सुश्री अदिति डोंगरावत, अधिवक्ता

प्रतिवादियों की ओर से : श्री आदित्य रमन, ए.सी टू जी.ए-III

20/29.01.2024 पक्षों की सुनवाई की गई।

2. याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय से दिनांक 24.06.2008 के पत्र (रिट याचिका के अनुलग्नक-8) को रद्द करने की प्रार्थना की है, जिसके द्वारा प्रतिवादियों द्वारा सुपर सेलेक्शन स्केल के भुगतान के लिए याचिकाकर्ता के दावे को खारिज कर दिया गया है।

इसके अलावा प्रतिवादियों को सुपर सीनियर चयन स्केल प्रदान करने के लिए निर्देश देने के लिए प्रार्थना की गई है, अर्थात 01.04.1993 से 2200-4000 रुपये का वेतनमान, जिसके लिए याचिकाकर्ता हकदार है और 01.04.1993 से 30.04.2007 तक याचिकाकर्ता के वेतनमान को संशोधित करने के बाद वेतन के अंतर का भुगतान करने के लिए भी प्रार्थना की गई है।

याचिकाकर्ता ने प्रतिवादियों को निर्देश देने के लिए भी प्रार्थना की है कि वे याचिकाकर्ता को सुपर सीनियर चयन स्केल दिए जाने के बाद उसके सभी सेवानिवृत्ति लाभों को निर्धारित और संशोधित करें तथा 01.04.1993 से वेतन/पेंशन का बकाया भुगतान करें।

3. याचिकाकर्ता का मामला बहुत ही संकीर्ण दायरे में आता है। याचिकाकर्ता को 14.03.1967 को अप्रशिक्षित सहायक अध्यापक के पद पर नियुक्त किया गया था तथा वह अपनी सेवानिवृत्ति अर्थात 30.04.2007 तक उक्त पद पर कार्य करता रहा।

नियुक्ति के समय याचिकाकर्ता के पास बीएससी (गणित) की योग्यता थी। तत्पश्चात याचिकाकर्ता ने वर्ष 1970 में बीएड तथा वर्ष 1979 में एमएड की डिग्री के साथ-साथ वर्ष 1993 में एलएलबी की डिग्री भी प्राप्त की। याचिकाकर्ता का मामला यह है कि यद्यपि प्रारंभ में उसकी नियुक्ति अप्रशिक्षित वेतनमान पर हुई थी, किन्तु तत्पश्चात उसने वर्ष 1970 में बीएड की डिग्री प्राप्त की, अतः उसका वेतन 08.06.1970 से प्रशिक्षित वेतनमान में निर्धारित किया गया। तत्पश्चात, प्रतिवादियों ने दिनांक 19.12.1992 को एक परिपत्र जारी किया, जिसके द्वारा 01.01.1986 से सरकारी उच्च विद्यालयों के शिक्षकों के संवर्ग को सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल अर्थात 2200-4000 रुपये प्रदान करने का निर्णय लिया गया, अर्थात सीनियर स्केल शिक्षकों की कुल संख्या का 20% और तदनुसार, उत्तरी छोटानागपुर प्रमंडल के लिए 376 पद स्वीकृत किए गए। इसके अतिरिक्त, वित्त विभाग द्वारा जारी दिनांक 20.02.1993 के संकल्प के आलोक में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जिन शिक्षकों को प्रथम समयबद्ध प्रोन्नति या जूनियर सेलेक्शन ग्रेड मिला है, वे 01.01.1986 से संशोधित वेतनमान के हकदार हैं और जिन्होंने समयबद्ध प्रोन्नति या जूनियर सेलेक्शन ग्रेड प्राप्त करने की तिथि से 12 वर्ष की सेवा पूरी कर ली है, वे सुपर सीनियर सेलेक्शन ग्रेड के हकदार हैं।

4. याचिकाकर्ता का यह भी कहना है कि दिनांक 05.06.1998 के पत्र के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि निर्णय लिया गया है कि जिन लोगों ने प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है और पूरा कर लिया है, उन्हें स्क्रीनिंग के बाद और यदि सब कुछ संतोषजनक पाया जाता है, तो 2200-4000 रुपये का वेतनमान दिया जाएगा। उक्त पत्र के साथ संलग्न सूची से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता का मामला भी विचाराधीन था। याचिकाकर्ता को 30.06.1998 को प्रशिक्षण का प्रमाण पत्र भी जारी किया गया था, जिसमें यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि याचिकाकर्ता 2200-4000 रुपये के वेतनमान यानी सुपर सीनियर चयन वेतनमान के लिए भी हकदार है। जब याचिकाकर्ता को उक्त वेतनमान प्रदान नहीं किया गया तो उसने प्रतिवादियों के समक्ष प्रतिनिधित्व किया, लेकिन वह व्यर्थ गया। याचिकाकर्ता का यह भी कहना है कि अचानक दिनांक 24.04.1994 को एक विवादित पत्र जारी किया गया जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता 2200-4000 रुपये के सुपर सीनियर चयन स्केल के लिए पात्र नहीं है क्योंकि उसने स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त नहीं की है। आगे कहा गया है कि दिनांक 25.09.1997 के पत्र, खंड-3 और 5 के मद्देनजर याचिकाकर्ता को 01.04.1981 को वरिष्ठ वेतनमान प्रदान किया गया था और चूंकि याचिकाकर्ता ने 01.04.1993 को 12 वर्ष की सेवा पूरी कर ली थी जबकि सुपर सीनियर चयन स्केल 01.01.1986 से प्रभावी हुआ था, इसलिए याचिकाकर्ता सुपर सीनियर चयन स्केल के लिए पात्र नहीं था।

सुपर सीनियर चयन स्केल देने के लिए उनके मामले पर विचार न किए जाने से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अर्पण मिश्रा ने जोरदार ढंग से तर्क दिया कि याचिकाकर्ता सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल के लिए हकदार है और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विभिन्न निर्णयों के मद्देनजर आरोपित आदेश में बताए गए कारणों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने जोर देकर तर्क दिया कि सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल देने के लिए नियम और शर्तों के अनुसार पोस्ट-ग्रेजुएशन डिग्री की आवश्यकता थी। कहीं भी यह उल्लेख नहीं किया गया है कि यह शिक्षा में पोस्ट-ग्रेजुएशन नहीं होना चाहिए, बल्कि यह अन्य अनुशासन से होना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि चूंकि याचिकाकर्ता अपेक्षित योग्यता पूरी कर रहा था, इसलिए वह सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल के वित्तीय लाभों के लिए हकदार था। विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल एक नियमित पदोन्नति नहीं है, बल्कि यह वित्तीय उन्नयन है और अपेक्षित योग्यता पूरी करने वाला याचिकाकर्ता इसके लिए हकदार है। यह सच है कि याचिकाकर्ता ने स्नातकोत्तर किया है और अपनी डिग्री प्राप्त की है, इसलिए प्रतिवादियों द्वारा स्वयं पर भरोसा किए गए स्थापित नियमों के मद्देनजर याचिकाकर्ता 01.04.1993 से सुपर सीनियर चयन स्केल के लिए हकदार है।

6. दूसरी ओर, प्रतिवादी राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आदित्य रमन ने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का पुरजोर विरोध करते हुए कहा कि याचिकाकर्ता किसी भी तरह से उक्त लाभों का हकदार नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि लाभ प्राप्त करने के लिए याचिकाकर्ता की इच्छानुसार व्याख्या नहीं की जा सकती। अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए विद्वान अधिवक्ता ने **डॉ. प्रीत सिंह बनाम एस.के. मंगल एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भारी निर्भरता रखी, जिसकी रिपोर्ट **1993 अनुपूरक (1) एससीसी 714** में दी गई थी, जिसमें यह माना गया है कि किसी भी विषय में मास्टर डिग्री, शिक्षा में मास्टर डिग्री को नहीं समझती है। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि तार्किक अनुक्रम के मद्देनजर, याचिकाकर्ता किसी भी लाभ का हकदार नहीं है क्योंकि वह शिक्षा में मास्टर था और अन्य अनुशासन में मास्टर नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि एम.एड. को स्नातकोत्तर उपाधि नहीं कहा जा सकता, इसलिए सुपर सीनियर सेलेक्शन स्केल में उनकी पदोन्नति को खारिज कर दिया गया है। आरोपित आदेश को उचित ठहराते हुए तथा याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए निर्णयों में अंतर करते हुए, प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि मामला पदोन्नति से संबंधित है, जबकि याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए मामले नियुक्ति के हैं, इसलिए उन मामलों में निर्धारित अनुपात वर्तमान मामले में बाध्यकारी नहीं हैं, बल्कि **डॉ. प्रीत सिंह (सुप्रा)** के मामले में निर्धारित अनुपात पूरी तरह लागू है, इसलिए याचिकाकर्ता किसी भी लाभ का हकदार नहीं है।

7. पक्षों की प्रतिद्वंद्वी दलीलें सुनने और रिकॉर्ड पर लाए गए दस्तावेजों के अवलोकन के बाद, यह न्यायालय इस विचार पर पहुंचा है कि याचिकाकर्ता के मामले पर विचार किए जाने की आवश्यकता है। बेशक, याचिकाकर्ता के पास मास्टर डिग्री है, जो विवाद का विषय नहीं है। निर्णय किए जाने वाला मुद्दा यह है कि एम.एड. मास्टर डिग्री पोस्ट-ग्रेजुएशन के बराबर है या नहीं।

8. उक्त मुद्दा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष **श्रीमती जुथिका भट्टाचार्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य** के मामले में विचारार्थ आया, जिसकी रिपोर्ट **(1976) 4 एससीसी 96** में दी गई, जिसमें उनके माननीय न्यायाधीशों ने माना है कि शिक्षा की परिष्कृत और सुंदर दुनिया में, एम.एड. या एल.एल.एम. जैसी मास्टर डिग्री धारक ही स्नातकोत्तर डिग्री धारक के रूप में मान्यता प्राप्त करता है। ज्ञापन में अभिव्यक्ति का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है। उपरोक्त मामले में निर्धारित कानूनी प्रस्तावों के मद्देनजर कोई अंतर नहीं किया जा सकता है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार है:

> "7. इस तर्क के दूसरे भाग के संबंध में कि चूंकि अपीलकर्ता के पास बी.ए., बी.टी. की योग्यता है, इसलिए उसे "स्नातकोत्तर डिग्री" रखने वाला माना जाना चाहिए, फिर से उस संदर्भ को ध्यान में रखना चाहिए जिसमें विशेष अभिव्यक्ति होती है और नुस्खे का उद्देश्य। यह अकल्पनीय नहीं है कि अभिव्यक्ति "स्नातकोत्तर डिग्री" व्यापक और सामान्य अर्थ में किसी दिए गए संदर्भ में स्नातक के बाद प्राप्त की गई कोई भी डिग्री हो सकती है और जिसे केवल स्नातक ही प्राप्त कर सकता है। लेकिन यह वह अर्थ नहीं है जिसमें ज्ञापन विशेष अभिव्यक्ति का उपयोग करता है। "स्नातकोत्तर डिग्री" से तात्पर्य एम.ए. या एम.एससी. जैसी मास्टर डिग्री से है न कि बी.टी. जैसी स्नातक डिग्री से। दूसरे शब्दों में, अभिव्यक्ति स्नातक स्तर पर बुनियादी योग्यता प्राप्त करने के बाद किसी भी विशेषता में उच्च स्तर पर अध्ययन के पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा करने को दर्शाती है। बी.टी. हमें बताया गया है कि अध्ययन का यह पाठ्यक्रम केवल स्नातकों के लिए खुला है और शब्दकोशीय भाषा में कहें तो "बैचलर ऑफ टीचिंग" की डिग्री को "स्नातकोत्तर" डिग्री कहा जा सकता है, इस अर्थ में कि यह डिग्री केवल स्नातक होने के "बाद" ही प्राप्त की जा सकती है। यही वह अर्थ है जिसमें "पोस्ट" शब्द का प्रयोग "विवाह के बाद", "भोजन के बाद", "शल्यक्रिया के बाद", "मृत्यु के बाद" इत्यादि जैसे भावों में किया जाता है। इन भावों में, "पोस्ट" का अर्थ केवल "बाद में" होता है, जिसमें किसी घटना के एक निश्चित समय के बाद होने पर जोर दिया जाता है। लेकिन "स्नातकोत्तर डिग्री" शब्द ने शैक्षणिक दुनिया में एक विशेष महत्व, एक तकनीकी विषय-वस्तु प्राप्त कर ली है। बी.टी. या एल.एल.बी. जैसी स्नातक डिग्री को स्नातकोत्तर डिग्री नहीं माना जाता है, हालांकि ये डिग्रियाँ स्नातक होने के बाद ही ली जा सकती हैं। शिक्षा की परिष्कृत

> और सुरुचिपूर्ण दुनिया में, एम.एड. या एल.एल.एम. जैसी मास्टर डिग्री धारक ही स्नातकोत्तर डिग्री धारक के रूप में मान्यता प्राप्त करता है। ज्ञापन में इस अभिव्यक्ति का उपयोग इसी अर्थ में किया गया है। श्री सेन कहते हैं कि कुछ विदेशी विश्वविद्यालयों में स्नातक की डिग्री, जो केवल स्नातक होने के बाद प्राप्त की जा सकती है, को भी स्नातकोत्तर योग्यता माना जाता है। हम एक स्वदेशी साधन की व्याख्या से संबंधित हैं और हमें स्थानीय बोलचाल और समझ का ध्यान रखना चाहिए। ऐसी जागरूकता और समझ हमें उस निर्माण के लिए बाध्य करती है जिसके लिए हमने अपनी प्राथमिकता का संकेत दिया है। वास्तव में, संबंधित सभी लोगों ने नियम को उसी अर्थ में समझा जैसा कि अपीलकर्ता द्वारा स्वयं एम.ए. परीक्षा में बैठने के लिए मांगी गई अनुमति से स्पष्ट है। उसने प्रिंसिपल के पद के लिए अर्हता प्राप्त करने के लिए वह अनुमति मांगी थी।"

9. चूंकि, प्रतिवादियों के वकील **डॉ. प्रीत सिंह (सुप्रा)** के फैसले पर भरोसा करते हैं, जो **श्रीमती जुथिका भट्टाचार्य (सुप्रा)** के फैसले के काफी बाद आया था, कानूनी प्रस्तावों के बीच संघर्ष को देखते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **आनंद यादव और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** के मामले में, **(2021) 12 एससीसी 390** में रिपोर्ट किया, उनके लॉर्डशिप ने स्पष्ट रूप से देखा और माना कि हम यह समझने में विफल हैं कि प्रीत सिंह मामले में फैसले को वर्तमान मामले की तथ्यात्मक रूपरेखा में एक बाध्यकारी मिसाल कैसे माना जा सकता है, खासकर राम सेवक सिंह के मामले [(1999) 2 एससीसी 189] में की गई टिप्पणियों के मद्देनजर, जो स्पष्ट रूप से बताते हैं कि प्रीत सिंह मामले की राय का वास्तविक आधार क्या था।

उनके माननीय न्यायाधीशों ने आगे कहा कि विशेषज्ञ समिति के आधार पर, शिक्षा में सहायक प्रोफेसर के पद के लिए दोनों को समान माना जा सकता है। इस प्रकार, न तो प्रतिवादी पक्ष यानी प्रतिवादी **3** और न ही इस न्यायालय को विशेषज्ञों के निर्णय पर अपील की अदालत के रूप में बैठना चाहिए।

आनंद यादव एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य के मामले में निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ, **(2021) 12 एससीसी 390** में रिपोर्ट किए गए, निम्नानुसार हैं:

> "**36.** हमने प्रीत सिंह मामले में दिए गए फैसले [प्रीत सिंह बनाम एस.के. मंगल, 1993 सप (1) एससीसी 714: 1993 एससीसी (एल **&** एस) 246] का भी अध्ययन किया है। उच्च न्यायालय का विवादित आदेश [संजय कुमार दुबे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन सभी 5940] लगभग पूरी तरह से इसी फैसले पर आधारित है, मानो कोई मुद्दा ही नहीं था जिस पर विचार किया जा सके, हालांकि राम सेवक सिंह मामले के बाद के फैसले [राम सेवक सिंह बनाम यूपी सिंह, (1999) 2 एससीसी 189: 1999 एससीसी (एल एंड एस)

538] में इस अंतर को मान्यता दी गई थी। यह कहना गलत नहीं होगा कि अक्सर किसी मामले में निर्धारित कानून का प्रस्ताव मामले के तथ्यों जितना ही अच्छा होता है। प्रीत सिंह केस [प्रीत सिंह बनाम एस.के. मंगल, 1993 सप्प (1) एस.सी.सी. 714: 1993 एस.सी.सी. (एल एंड एस) 246] संबंधित विज्ञापन में दोहरी आवश्यकताओं से संबंधित था, अर्थात किसी भी विषय में स्नातकोत्तर डिग्री और शिक्षा में डिग्री। यहां ऐसी कोई दोहरी योग्यता निर्धारित नहीं की गई है। इतना ही नहीं, भर्ती प्रिंसिपल के पद के लिए थी और वह भी मामला ऐसे व्यक्ति से संबंधित था जिसकी योग्यता प्राप्त अंकों के मामले में बहुत अधिक नहीं थी। मानदंडों में संशोधन करके भी उम्मीदवार की मदद करने का प्रयास किया गया था और इस प्रकार, न्यायालय सही ढंग से इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यह उचित नहीं था। हम संबंधित विज्ञापन के लिए अलग-अलग मानदंडों से निपट रहे हैं, संबंधित विषय में डिग्री की आवश्यकता, इस मामले में "शिक्षा", और पात्र व्यक्तियों के लिए अपेक्षित अंक होना। इस प्रकार, हम यह समझने में असफल रहे कि प्रीत सिंह मामले में दिए गए फैसले [प्रीत सिंह बनाम एस.के. मंगल, 1993 सप (1) एससीसी 714: 1993 एससीसी (एल एंड एस) 246] को वर्तमान मामले की तथ्यात्मक रूपरेखा में एक बाध्यकारी मिसाल कैसे माना जा सकता है, खासकर राम सेवक सिंह मामले में की गई टिप्पणियों के मद्देनजर [राम सेवक सिंह बनाम यू.पी. सिंह, (1999) 2 एससीसी 189: 1999 एससीसी (एल & एस) 538], जो स्पष्ट रूप से यह बताता है कि प्रीत सिंह मामले में दी गई राय का वास्तविक आधार क्या था [प्रीत सिंह बनाम एस.के. मंगल, 1993 सप (1) एससीसी 714: 1993 एससीसी (एल एंड एस) 246]।

37. हम ध्यान दें कि कभी-कभी वास्तविक अनुपात निर्णय को देखे बिना ही एक निर्णय को मिसाल के तौर पर मान लिया जाता है। ऐसा ही प्रतीत होता है कि विवादित आदेश [संजय कुमार दुबे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन ऑल 5940] में हुआ है। उच्च न्यायालयों के कुछ अन्य निर्णय भी हैं, जिन पर भरोसा करके यह प्रस्ताव पेश किया गया कि एमएड को एमए (शिक्षा) के समकक्ष न मानने की व्यापक स्वीकृति है। यह स्पष्ट है कि वे दो अलग-अलग डिग्रियाँ हैं; इसे एनसीटीई ने भी मान्यता दी है, जबकि दोनों डिग्रियों के बीच सूक्ष्म अंतर पर जोर दिया गया है कि एक मास्टर डिग्री है लेकिन पेशेवर डिग्री नहीं है, जबकि दूसरी पेशेवर डिग्री है। यदि दोनों डिग्रियाँ समान हैं, तो समानता का कोई सवाल ही नहीं है। समतुल्यता का मुद्दा तभी उठता है जब दो अलग-अलग डिग्रियाँ हों और यह तय किया जाना चाहिए कि क्या कुछ उद्देश्यों के लिए उन्हें समतुल्य माना जा सकता है। प्रतिवादी 2 और 5 द्वारा गठित संबंधित विशेषज्ञ समितियों के परिणामस्वरूप ठीक यही हुआ है। नियोक्ता यानी प्रतिवादी 2 ने विशेषज्ञ समिति की सिफारिश को स्वीकार कर लिया था। यूजीसी ने भी यह रुख अपनाया है कि जहाँ तक दोनों डिग्रियों का सवाल है, दोनों स्नातकोत्तर डिग्रियाँ हैं और प्रतिवादी 5 होने के नाते

समतुल्यता प्राधिकारी ने भी विशेषज्ञ समिति के आधार पर राय दी है कि शिक्षा में सहायक प्रोफेसर के पद के लिए दोनों को समतुल्य माना जा सकता है। इस प्रकार, विशेषज्ञों के निर्णय पर अपील की अदालत के रूप में बैठना न तो प्रतिवादी यानी प्रतिवादी 3 के लिए है और न ही इस न्यायालय के लिए। हम यह भी ध्यान दें कि प्रतिवादी 3 को वास्तव में 22-5-2018 को जारी अंतिम सूची के अनुसार 2014 की चयन प्रक्रिया में चुना गया है।"

10. प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत अन्य तर्क - कि चूंकि मामले के तथ्य भिन्न हैं, क्योंकि उस मामले में याचिकाकर्ता नियुक्ति का दावा कर रहा था और वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता पदोन्नति का दावा कर रहा है, अतः उपरोक्त मामलों का अनुपात वर्तमान मामले में सीधे लागू नहीं किया जा सकता, अतः यह न्यायालय स्वीकार नहीं करता है और इसे खारिज किया जाना उचित है।

11. प्रतिवादियों द्वारा स्वयं निर्धारित नियमों और शर्तों से यह प्रतीत होता है कि चूंकि याचिकाकर्ता अपेक्षित योग्यताएं पूरी कर रहा है, जैसा कि रिट याचिका के अनुलग्नक-8 पृष्ठ 49 पर दिए गए आदेश से प्रतीत होता है, इस न्यायालय का विचार है कि अनुलग्नक-8 पर दिया गया आदेश निरस्त किए जाने योग्य है और इसे निरस्त किया जाता है।

12. प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे इस आदेश की प्रति प्राप्त होने/पेश होने की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता को लाभ प्रदान करें। चूंकि अनुरोधित राहत पहले ही प्रदान की जा चुकी है, इसलिए पेंशन लाभों को संशोधित करके परिणामी लाभ भी याचिकाकर्ता को प्रदान किए जाएंगे। कहने की आवश्यकता नहीं है कि याचिकाकर्ता को मिलने वाले बकाया, यदि कोई हो, की गणना भी की जाएगी और चार सप्ताह की अतिरिक्त अवधि के भीतर याचिकाकर्ता को प्रदान किए जाएंगे।

13. तदनुसार रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

(न्यायमूर्ति डॉ. एस.एन.पाठक)

यह अनुवाद सुश्री लीना मुखर्जी, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।